आई.आई.टी. तकनीकी शिक्षा के प्रतिमान

पी. बालाराम

बंगाल के मिदनापुर ज़िले में हिजली डिटेन्शन कैम्प वह जगह थी जहां दो निशस्त्र कैदियों, तारकेश्वर सेनगुप्ता और संतोष मित्रा को पुलिस ने 16 सितम्बर, 1931 के दिन मार डाला था। उनके शव सुभाष चन्द्र बोस ने प्राप्त किए थे। भारत की आज़ादी की लड़ाई का यह एक भावभीना क्षण था।

1946 में आज़ादी की पूर्व बेला में नलिनी रंजन सरकार समिति भारत के 'युद्धोपरांत विकास के लिए उच्च तकनीकी शिक्षा संस्थान' स्थापित करने पर विचार करने को गठित हुई थी। सरकार समिति ने देश के विभिन्न इलाकों में चार राष्ट्रीय संस्थानों का विचार रखा। प्रस्ताव यह था कि ये संस्थान पश्चिम के सर्वोत्तम संस्थानों की तर्ज़ पर बनाए जाएं। स्नातक स्तर पर बढ़िया स्टैंडर्ड के लिए समिति ने मेनचेस्टर और मैसाचुसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी (एम.आई.टी.) को चुना। आज के संदर्भ में देखें तो मानक के रूप में मेनचेस्टर का चयन थोड़ा अजीब लगता है; एम.आई.टी. को लेकर शायद ही किसी को आपत्ति हो। आई.आई.टी. का जन्म सरकार समिति की सिफारिश से हुआ और इनमें से पहला संस्थान खड़गपुर में मई 1950 में अस्तित्व में आया। सितम्बर 1950 में यह आई.आई.टी. हिजली डिटेन्शन कैम्प के अपने वर्तमान परिसर में पहुंच गया।

आई.आई.टी. का तंत्र 1950 के उत्तरार्ध और 1960 के पूर्वार्ध में तेज़ी से फैला। बम्बई (1958), मद्रास (1959), कानपुर (1963) और दिल्ली (1963) में विदेशी सहायता से आई.आई.टी. की स्थापना हुई। इनकी प्रकृति पर सम्बंधित विदेशी सहयोगी की स्पष्ट छाप पड़ी। समय के साथ आई.आई.टी. का अपना ही एक चरित्र उभरा और इसने भारत की इंजीनियरिंग शिक्षा का नज़ारा ही बदल दिया। आई.आई.टी. प्रयोग की सफलता के चलते गौहाटी और रुड़की में भी आई.आई.टी. की स्थापना की गई है। गौहाटी तो पूरी तरह नया संस्थान है मगर रुड़की में एक मौजूदा विश्वविद्यालय को ही आई.आई.टी. में बनाया गया है।

आई.आई.टी. खड़गपुर ने 2001 में अपनी स्वर्ण जयंती मनाई। मगर एकजुटता का प्रशंसनीय प्रदर्शन करते हुए आई.आई.टी. के पूर्व छात्रों ने खड़गपुर आई.आई.टी. के पचास कामयाब वर्षों का जश्न उत्तरी कैलिफोर्निया में सिलिकॉन वैली में मनाया। यह विडम्बना ही है कि आई.आई.टी. प्रयोग की सफलता का पहला जश्न दूर कैलिफोर्निया में हुआ जहां अधिकांश सफल पूर्व छात्र रहते हैं। इस अवसर पर बिल गेट्स ने आई.आई.टी. की शैक्षणिक साख पर अपनी मुहर लगाई और सी.बी.एस. टेलीविज़न नेटवर्क ने पूरे 60 मिनट के कार्यक्रम में आई.आई.टी. को प्रस्तुत किया। कुछ लोग शायद भारत के प्रथम तकनीकी संस्थान के इस जश्न पर थोड़े व्यग्र होंगे। उन्हें यह जानकर शायद थोड़ा सुकून मिलेगा कि आई.आई.टी. के 50 साल पूरा होने का एक जश्न वहां के पूर्व छात्रों ने बैंगलोर में फरवरी 2003 में मनाया। इस अवसर पर 'राष्ट्र निर्माण में आई.आई.टी. की भूमिका' पर एक सेमीनार भी आयोजित किया गया। इस सेमीनार में चर्चा की शुरुआत आई.आई.टी. के उन पूर्व छात्रों ने की जो समाज के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत हैं - उद्योग, राजनीति और शिक्षा व अनुसंधान। अलबत्ता, उन पूर्व छात्रों के बारे में ज़्यादा चर्चा नहीं हुई जो पर्यावरण आंदोलन वगैरह सामाजिक सरोकारों से जुड़े हैं। इस संदर्भ में अनिल अग्रवाल का नाम गिनाया जा सकता है। एक पूर्व छात्र के रूप में मैं भी इस अवसर पर शामिल हुआ था। वैसे मुझे लगता है कि इस बारे में मेरे विचार थोड़े अलग हैं कि आई.आई.टी. क्या रहे हैं और क्या होना चाहिए।

आई.आई.टी. की विश्वव्यापी छवि निश्चित तौर पर उसके उन पूर्व छात्रों की सफलता पर टिकी है जिन्होंने इंजीनियरिंग के विभिन्न विषयों में स्नातक उपाधि प्राप्त की

है। यही वे लोग हैं जिन्होंने टेक्नॉलॉजी का विकास किया है, अवसर और समृद्धि निर्मित की है। इन्होंने ही आई.आई.टी. को तकनीकी शिक्षा में उत्कृष्टता का पर्याय बनाया है। आई.आई.टी. में प्रवेश के लिए जो संयुक्त प्रवेश परीक्षा होती है उसमें इतनी प्रतिस्पर्धा है कि परीक्षार्थियों में से मात्र 2 फीसदी को ही प्रवेश मिल पाता है। देश के समस्त इंजीनियरिंग उम्मीदवारों के बीच आई.आई.टी. की ऐसी धाक है कि हज़ारों आकांक्षी छात्र एक-दो साल तक कोचिंग क्लासों में सिर फोड़ने के बाद ही संयुक्त प्रवेश परीक्षा में बैठने की हिम्मत जुटा पाते हैं। चयन की इस प्रक्रिया की वजह से आई.आई.टी. में प्रवेश पाने वाले छात्रों में एक किस्म की शैक्षिक एकरूपता आ जाती है। ज़रूरी नहीं कि उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए यह कोई अच्छी बात ही हो।

विश्लेषण और गणितीय क्षमता के बल पर प्रवेश पाने वाले ये स्नातक छात्र जब प्रबंधन, वित्त, विपणन और वाणिज्य प्रशासन जैसे क्षेत्रों में घुसते हैं तो असाधारण रूप से सफल साबित होते हैं। पिछले कई वर्षों में आई.आई.टी. के स्नातक कार्यक्रमों ने पश्चिम के विकसित देशों को अत्यंत सुप्रशिक्षित तकनीकी मानव संस्थान उपलब्ध कराया है। यह कोई अचरज की बात नहीं है कि आई.आई.टी. की स्वर्ण जयंती भारत की अपेक्षा सान जोस में ज़्यादा जोश से मनाई गई।

आई.आई.टी. प्रशिक्षित इंजीनियर्स ने सिर्फ भौगोलिक प्रवास किया हो, ऐसी बात नहीं है। वे उस तकनीकी क्षेत्र से भी दूर हटे हैं जिसमें उन्हें प्रशिक्षण मिला था। व्यापार की ओर पलायन के अलावा, विभिन्न किस्म के इंजीनियर्स 'सूचना टेक्नॉलॉजी' की ओर भी झुकते गए हैं। यह 'विषय-प्रवास' आने वाले वर्षों में शायद काफी महत्वपूर्ण साबित हो।

आई.आई.टी. का जन्म उस ज़माने में हुआ था जब नेहरुवादी दृष्टि में यह स्पष्ट मान्यता थी कि भारत में बदलाव में विज्ञान और टेक्नॉलॉजी का वर्चस्व रहेगा। यह हुआ भी मगर तकनीकी विकास के लाभ बढ़ती आबादी के सामने ओछे पड़ गए और आर्थिक विषमता बढ़ती गई। आई.आई.टी. फली-फूलीं और उनके पूर्व छात्र कुछ क्षेत्रों में बदलाव के प्रवर्तक भी रहे। आई.आई.टी. भारत की तकनीकी शिक्षा के हीरो की तरह है। अपने स्नातक छात्रों की गुणवत्ता के बल पर उनकी विश्वव्यापी साख है। बहरहाल, यह शायद सही मौका है कि हम आई.आई.टी के शैक्षणिक तौर-तरीकों पर थोड़ा विचार करें। इस सम्बंध में भी सवाल उठाए जाने चाहिए कि इन संस्थानों में शोध की क्या स्थिति है और विज्ञान व इंजीनियरिंग के बीच बढ़ती खाई पर भी सोचा जाना चाहिए।

पश्चिम के सारे महान विश्वविद्यालय अपने शिक्षण व शोध के विषयों के मामले में सर्वग्राही रहे हैं। यहां तक कि टेक्नॉलॉजी के संस्थानों में भी एजेण्डा सिर्फ इंजीनियरिंग के स्नातक पाठ्यक्रमों तक सीमित नहीं रहा है। ये संस्थान अपने शोध की व्यापकता और गहराई के लिए जाने जाते हैं। इस संदर्भ में सवाल यह उठता है कि भारत के शैक्षणिक परिदृश्य में आई.आई.टी. कहां फिट होते हैं?

इस सवाल के जवाब में हमारे सामने तीन मॉडल आते हैं जहां उच्च शिक्षा एक ऐसे माहौल में दी जाती है जो शोध को बढ़ावा दे। पहला मॉडल हमारे विश्वविद्यालयों का है जिनमें बनारस, इलाहाबाद, कलकत्ता, मद्रास और दिल्ली जैसे विश्वविद्यालय हैं। आज़ादी के बाद के कुछ वर्षों तक इन विश्वविद्यालयों ने ही देश में शैक्षणिक फसल पैदा की है। दूसरे हमारे शोध संस्थान हैं जो मूलतः स्नातकोत्तर अनुसंधान में लगे हैं। इनमें इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइन्स प्रमुख हैं। और फिर आई.आई.टी. हैं। मैंने जान-बूझकर विशिष्ट क्षेत्रों से संबंधित राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं को इस सूची में शामिल नहीं किया है। उपरोक्त तीनों किस्म के संस्थानों की अपनी खूबियां हैं। मगर आज उनकी हालत चिंता का विषय होना चाहिए। विश्वविद्यालयों की हालत खस्ता है: इंजीनियरिंग, विज्ञान और मानविकी एकदम अलग-अलग हो गए हैं। जिन विश्वविद्यालयों का ज़िक्र मैंने ऊपर किया है, वे यकीनन अपने इतिहास पर गर्व कर सकते हैं जब देश के बौद्धिक संसाधन वहां से निकला करते थे। ये सभी शिक्षा व अनुसंधान के केंद्र रहे हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारे विश्वविद्यालयों में उल्लेखनीय इंजीनियरिंग विभाग विकसित हुए हैं - बनारस में मेटलर्जी और बम्बई में